0645CH08

सीता की खोज

राम के मन में कई प्रकार के प्रश्न थे। आशंकाएँ थीं। मारीच की माया उन्होंने देख ली थी। वह छल से उन्हें कुटिया से दूर ले आया था। "अब क्या होगा?" यही सोचते हुए वे कुटिया की ओर भागे चले जा रहे थे। वापसी में एक पल भी विलंब नहीं करना चाहते थे। लक्ष्मण को वे कुटी पर छोड़ आए थे। सीता की रखवाली के लिए। "अच्छा हो कि लक्ष्मण वहीं हों। मारीच की मायावी आवाज़ उन तक न पहुँची हो," राम ने सोचा। "सीता अकेली रहीं तो राक्षस उन्हें मार डालेंगे। खा जाएँगे।"

तभी उन्होंने पगडंडी से लक्ष्मण को आते देखा। वही हुआ, जिसका राम को डर था। अनिष्ट की आशंका और बढ़ गई। पता नहीं सीता किस हाल में होंगी? राक्षसों ने उन्हें मार डाला होगा? उठा ले गए होंगे? अकेली सीता दुष्ट राक्षसों के सामने क्या कर पाई होंगी? कुटी छोड़कर आने पर वह लक्ष्मण से क्रुद्ध थे। उन्होंने क्रोध पर नियंत्रण रखा। लक्ष्मण का बायाँ हाथ ज़ोर से पकड़ लिया। डर ने दोनों भाइयों को घेर लिया था।

"देवी सीता ने मुझे विवश कर दिया, भ्राते! उनके कटु वचन मैं सहन नहीं कर सका। कटाक्ष और उलाहना नहीं सुन सका। मैं जानता था कि आप सकुशल होंगे। आपकी सुरक्षा को लेकर मन में कोई संदेह नहीं था। तब भी मुझे कुटिया छोड़कर आना पड़ा," लक्ष्मण ने कहा।

"यह तुमने अच्छा नहीं किया। तुम्हें मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए था। अब जल्दी चलो। मेरा मन चिंतित है। सीता न जाने किस हाल में होंगी। कैसी होंगी। मायावी राक्षसों का कोई ठिकाना नहीं।" राम ने चलने की गति और बढ़ा दी।

कुटिया अभी कुछ दूर थी। पर दिखाई पड़ने लगी थी। राम ने वहीं से पुकारा, "सीते! तुम कहाँ हो?" जैसे कि उन्हें पता चल गया हो कि सीता आश्रम में नहीं हैं। कुटिया मौन रही। वहाँ से कोई उत्तर नहीं मिला। राम की बेचैनी बढ़ गई। उनकी

एक आवाज़ पर कहीं से भी उपस्थित हो जाने वाली सीता वहाँ नहीं थीं। अनुपस्थिति बोलती कैसे?

राम की आवाज़ पेड़ों से टकराकर हवा में विलीन हो गई। कुटिया के शून्य में समा गई। राम पुकारते रहे। उत्तर में उन्हें हर बार सन्नाटा ही मिला। चुप्पी हर ओर थी। हर दिन हवा में झूलने वाले पत्ते शांत थे। लताएँ गुमसुम पड़ी हुई थीं। चिड़ियों की चहक लुप्त थी। कुटिया के निकट घूमने वाले पशु-पक्षी चुप खड़े थे। सब स्तब्ध!

राम भागते हुए आश्रम पहुँचे। कुटिया में जाकर देखा। "सीते! सीते!" पुकारते हुए उन्होंने आसपास की हर जगह देखी। पेड़ों-झाड़ियों के पीछे गए। उन स्थानों की ओर भागे, जहाँ सीता जा सकती थीं। सीता का कहीं पता न था। शोक से व्याकुल राम रोने लगे। सीता से बिछुड़ना उनके लिए असहनीय आघात था। वे सुध-बुध भुला बैठे।

विरह में वे गोदावरी नदी के पास गए। उससे पूछा, "तुमने सीता को कहीं देखा है?" नदी ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे पंचवटी के एक-एक वृक्ष के पास गए। सबसे पूछा। कोई सीता का पता बता दे। हाथी के पास गए। शेर से पूछा। फूलों के पास रुके। चट्टानों, पत्थरों से प्रश्न किया। शोक संतप्त राम भूल गए कि चट्टानें नहीं बोलतीं। पेड़-पौधे बात नहीं करते। उनकी भाषा मौन है। उनके उत्तर भी मौन ही हैं।

राम की मानसिक स्थिति विक्षिप्त जैसी थी। एक बार उन्हें लगा कि सीता वहीं हैं। कुटिया के पास। अभी भागकर पेड़ के पीछे छिप गई हैं। उन्हें खिझाने के लिए।

"मेरे साथ परिहास मत करो, सीते!" राम उस पेड़ की ओर दौड़ पड़े। वहाँ कोई नहीं था। वे निराश होकर पेड़ के नीचे बैठ गए।

राम का दुख लक्ष्मण से देखा नहीं जा रहा था। उनका व्यवहार सहन नहीं हो रहा था। वे राम के निकट गए। विलाप करते राम ने कहा, "मैं सीता के बिना नहीं रह सकता। तुम अयोध्या लौट जाओ, लक्ष्मण। मैं वहाँ नहीं जाऊँगा। यहीं प्राण दे दूँगा। मैं सीता के साथ आया था। उसके बिना कैसे लौटूँगा? नगरवासियों को क्या मुँह दिखाऊँगा? तुम जाओ। मुझे यहीं छोड़ दो।"

"आप आदर्श पुरुष हैं। आपको धैर्य रखना चाहिए। इस तरह दुःख से कातर नहीं होना चाहिए। हम मिलकर सीता की खोज करेंगे। वे जहाँ भी होंगी, हम उन्हें ढूँढ़ निकालेंगे। सीता हमारी प्रतीक्षा कर

रही होंगी।" लक्ष्मण ने उन्हें ढाढ़स बँधाते हुए कहा।

राम शांत हुए। पर थोड़ी ही देर में "हा प्रिये!" कहते हुए पुनः विलाप करने लगे।

इसी बीच आश्रम के आसपास भटकने वाला हिरणों का एक झुंड राम-लक्ष्मण के निकट आ गया। राम को लगा कि हिरण सीता के बारे में जानते हैं। उन्हें कुछ बताना चाहते हैं। "हे मृग! तुम्हीं बताओ सीता कहाँ हैं?" राम ने पूछा। हिरणों ने सिर उठाकर आसमान की ओर देखा और दक्षिण दिशा की ओर भाग गए। राम ने संकेत समझ लिया "हमें सीता की खोज दक्षिण दिशा में ही करनी चाहिए," उन्होंने लक्ष्मण से कहा। "हिरण उसी ओर गए हैं।"

वन में भटकते हुए उन्होंने एक टूटे हुए रथ के टुकड़े देखे। मरा हुआ सारथी और मृत घोड़े भी थे। "वन में रथ का क्या प्रयोजन? उसके टूटने का क्या अर्थ?" राम असमंजस में पड़ गए।

"लगता है थोड़ी देर पहले यहाँ संघर्ष हुआ है," लक्ष्मण ने कहा। "यह पुष्पमाला वही है, जिसे सीता ने वेणी में गूँथ रखा था। निश्चित तौर पर सीता राक्षसों के चंगुल में फँस गई हैं। यह माला संघर्ष के दौरान वेणी से टूटकर गिरी होगी।"

"पर यह रथ कैसे टूटा?" राम सोचने लगे। "सीता के संघर्ष से यह नहीं टूट सकता। अवश्य किसी ने राक्षसों को चुनौती दी होगी। उनसे युद्ध किया होगा।"

वहाँ से थोड़ी ही दूर राम ने पक्षिराज जटायु को देखा। पंख कटे हुए। लहूलुहान। अंतिम साँसें गिनते हुए। "हे राजकुमार! सीता को रावण उठा ले गया है। मेरे पंख उसी ने काटे। सीता का विलाप सुनकर मैंने रावण को चुनौती दी। उसका रथ तोड़ दिया। सारथी और घोड़ों को मार डाला। स्वयं रावण को घायल कर दिया। पर मैं सीता को नहीं बचा सका। रावण उन्हें लेकर दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर उड़ गया," कहते-कहते जटायु ने प्राण त्याग दिए।

राम ने आगे बढ़ने से पहले जटायु की अंतिम क्रिया की। वे सोचते रहे। पछताते रहे। "यह कैसा विधान है! मैं तो कष्ट में हूँ ही। मेरी सहायता करने वालों को भी इतना कष्ट!" राम की आँखें नम हो आईं। उन्होंने जटायु को अंतिम बार प्रणाम किया।

जटायु ने सीता के बारे में महत्त्वपूर्ण सूचना दी थी। रावण का नाम बताया। दिशा बताई, जिधर सीता को लेकर वह गया। राम जटायु की चिता के पास मौन खड़े थे। "यह समय विलाप करने का

नहीं है। हमें तुरंत दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर जाना चाहिए। सीता उधर ही होंगी," लक्ष्मण ने तत्परता दिखाई।

आगे का मार्ग और कठिन था। राम और लक्ष्मण को लगभग हर दिन राक्षसी आक्रमणों से जूझना पड़ा। अनेक कठिनाइयाँ आईं। अवरोध मिले। दोनों राजकुमार प्रत्येक बाधा पार करते चले गए। उनके सामने लक्ष्य स्पष्ट था। दिशा तय थी। उन्हें कोई नहीं रोक सकता था। वन-मार्ग जितना कठिन होता गया, उनकी दृढ़ता बढ़ती गई।

वनवासी राजकुमार प्रतिदिन सुबह उठते और दक्षिण दिशा की ओर चल पड़ते। एक दिन यात्रा के प्रारंभ में ही एक विशालकाय राक्षस ने उन पर आक्रमण कर दिया। उसका नाम कबंध था। कबंध देखने में बहुत डरावना था। मोटे माँसपिंड जैसा। गर्दन नहीं थी। एक आँख थी। दाँत बाहर निकले हुए। जीभ साँप की तरह। लंबी और लपलपाती हुई।

राम-लक्ष्मण को देखते ही कबंध प्रसन्न हो गया। उसने दोनों हाथ फैलाए। एक-एक हाथ से दोनों भाइयों को पकड़कर हवा में उठा दिया। उसे मनमाँगा आहार मिल गया था। बैठे-बिठाए। वह अपने शिकार को भुजाओं में लपेटकर मुँह तक ले जाता इससे पहले ही राम-लक्ष्मण ने अपनी तलवारें निकाल लीं। एक झटके में कबंध के हाथ काट दिए। उसके हाथ धरती पर गिर पड़े।

कबंध उनकी शक्ति और बुद्धि पर आश्चर्यचकित रह गया। "कौन हो तुम दोनों?" उसने पूछा। हम अयोध्या के महाराज दशरथ के पुत्र हैं। राम और लक्ष्मण। रावण ने राम की पत्नी सीता का हरण कर लिया है। हम उन्हीं की खोज में निकले हैं।

राक्षस कबंध ने राम के बारे में सुन रखा था। साक्षात् उन्हें देखकर प्रसन्न हो गया। उसने कहा, "मैं सीता के संबंध में कुछ नहीं जानता। लेकिन तुम दोनों की सहायता का उपाय बता सकता हूँ। मेरा एक छोटा-सा आग्रह स्वीकार करो तो। मेरा अंतिम संस्कार राम करें।"

राम ने इस पर सहमति व्यक्त की तो कबंध बोला, "आप दोनों पंपा सरोवर के निकट ऋष्यमूक पर्वत पर जाएँ। वह वानरराज सुग्रीव का क्षेत्र है। वे निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सुग्रीव से मदद का आग्रह कीजिए। उनके पास बहुत बड़ी वानर सेना है। सुग्रीव के वानर सीता को अवश्य खोज निकालेंगे।"

कबंध की साँस टूटने लगी थी। उसका अंत निकट था। राम और लक्ष्मण को
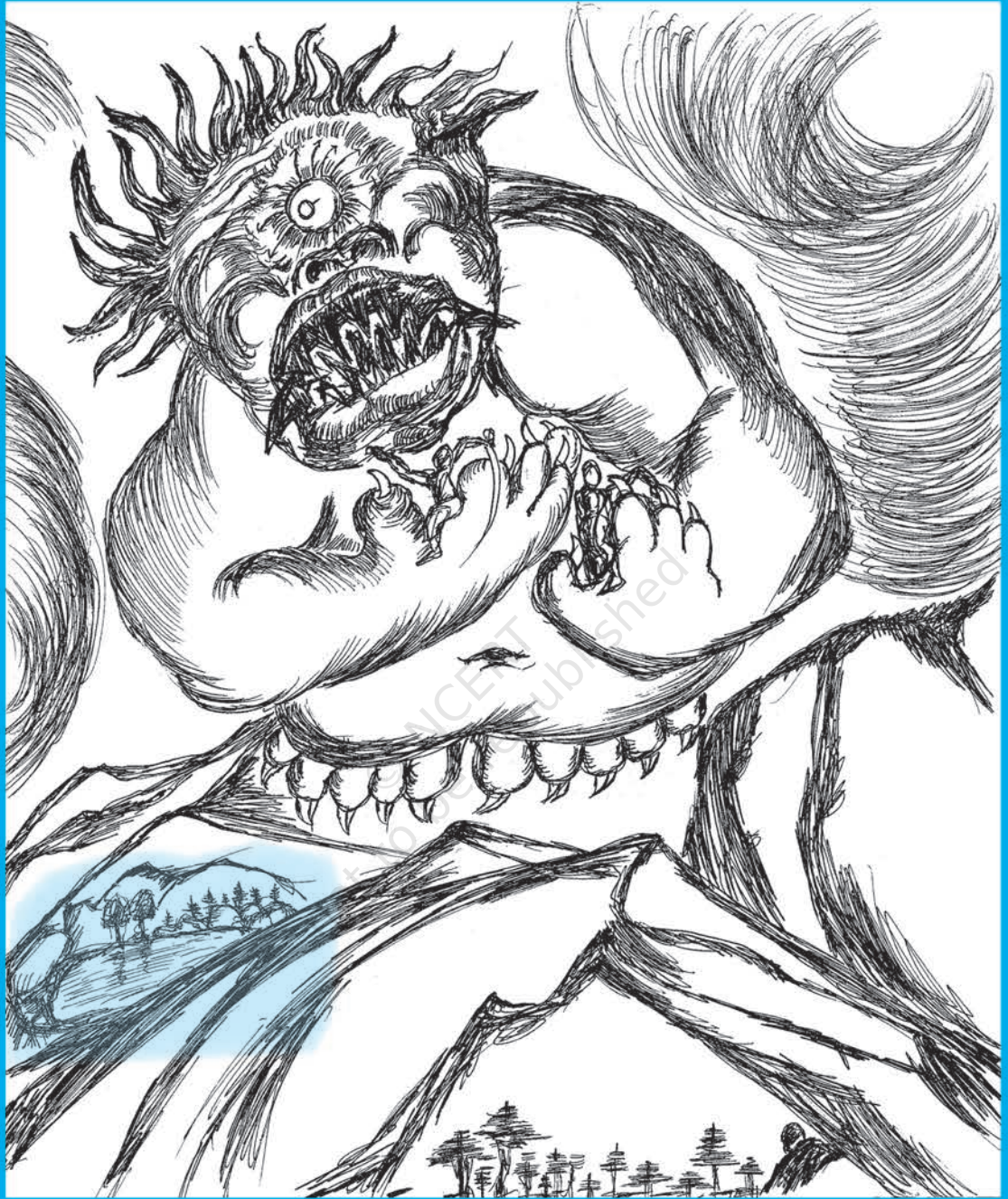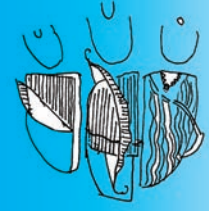
अपने निकट बुलाते हुए उसने कहा, "पंपा सरोवर के पास मतंग ऋषि का आश्रम है। वहीं उनकी शिष्या शबरी रहती है। आगे जाने से पूर्व शबरी से अवश्य मिल लें।" यही बोलते-बोलते कबंध ने प्राण त्याग दिए। राम ने अपना वचन पूरा करते हुए उसका अंतिम संस्कार किया और पंपासर की ओर चल पड़े।

कबंध की बातों से राम को बहुत ढाढ़स हुआ। सीता तक पहुँचने की आशा बलवती हुई। राम को सुग्रीव की क्षमता और उनकी वानर सेना की शक्ति का पता था। वे जल्दी सुग्रीव तक पहुँचना चाहते थे।

ऋष्यमूक पर्वत का रास्ता पंपा सरोवर होकर जाता था। पंपासर का प्राकृतिक सौंदर्य अद्भुत था। मतंग ऋषि का आश्रम उसी सरोवर के किनारे था। लता-कुंज से घिरा हुआ। सरोवर का पानी मीठा था। शबरी की कुटिया आश्रम में ही थी। वह ऋषि की शिष्या थी। उसकी आयु बहुत हो गई थी। जर्जर काया। लेकिन आँखें ठीक थीं। हर पल राम की प्रतीक्षा में खुली हुईं। ऋषि ने उसे बताया था कि एक दिन राम आश्रम में अवश्य आएँगे। और उससे मिलेंगे।

राम को आश्रम में देखकर शबरी बहुत प्रसन्न हुई। उनकी आवभगत की। सेवा की। खाने को मीठे फल दिए। रहने की जगह दी। उसकी आँखें तृप्त हो गईं। राम ने उससे सीता के संबंध में पूछा। "आप सुग्रीव से मित्रता करिए। सीता की खोज में वह अवश्य सहायक होगा। उसके पास विलक्षण शक्ति वाले बंदर हैं," शबरी ने राम को आश्वस्त किया।

अगले दिन राम ऋष्यमूक पर्वत चले गए। उनकी व्याकुलता अब और घट गई थी। मन की शांति लौट आई थी।